पत्र

किसी पत्रिका का पढ़ना तभी सार्थक लगता है जब उसमें प्रकाशित कोई रचना या लेख मन को छू ले और वह देर तक गूंजता रहे। इस दृष्टि से अक्टूबर-15 अंक के कई लेख उल्लेखनीय हैं। तुमने अपने सम्पादकीय में प्रगतिशील विचारधारा से जुड़े जिन अलग-अलग संगठनों के एकत्व और अंतिम अंश में जो पांच-छः सुझाव दिए हैं, उन्हें कुछ लोगों ने पहले भी कहा था किन्तु आश्चर्य है कि प्रगतिवादी-समानवादी सोच के संगठन की बातें तो आदर्श भी करते हैं किन्तु उसे व्यवहारिक रूप देने में एक कदम नहीं बढ़ते। क्या तुम्हें लगता है कि वे पांचों सुझाव निकट भविष्य में पूरे होंगे? असल में अलगाव और बिखराव का कारण अहं है। इससे मुक्त होना कठिन है।

रमेश उपाध्याय की भीष्म साहनी संबंधी वक्तव्य बहुत भावपूर्ण है। उनके वक्तव्य से ज्ञात होता है कि भीष्म जी श्रेष्ठ और महान रचनाकार होने के साथ ही अत्यंत उदार और सद्भावी स्वभाव के व्यक्ति थे। तभी तो विपरीत विचारधारा के थे। उनकी पत्नी ने कभी उपाध्याय से दूरी नहीं बनाई। मेरी दृष्टि में व्यक्ति का मूल्यांकन केवल उसके प्रवेश पर नहीं, अपितु उसके स्वभाव, आचरण और व्यवहार पर भी बहुत कुछ निर्भर करता है। वंदना अवस्थी का गया वर्णन पढ़कर भी अपनी गया यात्रा की याद आ गई। वहां के दृश्यों की याद करके आज भी मन वितृष्णा से भर जाता है और तब अनुभव होता है कि श्रद्धा सचमुच कितनी अंधी और विचार शून्य होती है।

गणपत तेली का मीरा पर माधव हाड़ा से साक्षात्कार बहुत महत्वपूर्ण है। 'मीरायन' आदि पत्रिकाओं अथवा मीरा संबंधी ग्रंथों में जो पढ़ने को मिलता है और जो जनमानस में प्रचलित है उससे अलग हटकर बातें की गई है। इन पर गंभीरता से तुलनात्मक चिंतन होना चाहिए ताकि सत्योद्घाटन हो सके। केवल लोक पिटाई न हो। राहुल राजेश की रामकिशोर मेहता के उपन्यास 'कैकेयी' की समीक्षा पढ़कर लगा कि उपन्यास परम्परा से हटकर अलग दृष्टि तथ्यों को प्रस्तुत करने वाला है। भले ही वे सर्वस्वीकृत हों, विवादास्पद हों। इसी प्रकार का एक उपन्यास 'दशानन' के बारे में भी पढ़ा था। 'कैकेयी' उपन्यास पढ़ने की जिज्ञासा है। समीक्षा पढ़कर आज ही प्रकाशक को पुस्तक वी.पी. से भेजने को लिख दिया है। प्रभाकर चौबे के लेख जब भी, जहां भी पढ़ता हूं, सुख मिलता है। 'ज्यों बड़े की अंखियां निरख आंखिन को सुख होता।' इस प्रकार इस अंक में बहुत कुछ नया पढ़ने को मिला। अच्छा लगा।

डॉ. गंगा प्रसाद बरसैंया, ए-7, फारचून पार्क
जी-3, गुलमोहर भोपाल-462039

'अक्षर पर्व' जून-15 में हेमलता महिश्वर का आलेख दिल को छू गया। भीष्म साहनी का सीधापन, उनकी सादगी से अवाक रह जाती हूं। भीष्म साहनी एक यथार्थवादी रचनाकार हैं। उनकी पकड़ वैज्ञानिक है। फिर भी वो अपने प्रतिबद्धताओं में उदार हैं। आनंदस्वरूप श्रीवास्तव की रचना 'वाङचू' एक स्मरणीय दास्तान है। गहरी संवेदनाओं से संपृक्त यह कहानी मानव मन की पीड़ा और संवेदना को उजागर करती है। चंचल चौहान की रचना में कल्पना साहनी का जिक्र आते ही मुझे 'रूस की एक झलक' जिसे कक्षा छठी में पढ़ाती थी- याद आ गई। कितनी जल्दी वह रूस के बच्चों के साथ घुल-मिल गई थी। आज जिस जगह पर हैं- जानकार मन झूम उठा।

उत्तिमा केशरी, पूर्णिया- 854301
फोन-06454-244776

जुलाई अंक की चारों कहानियां, विशेषकर 'जिद' बहुत पठनीय है, 'जिद' में कथाकार वीरा चतुर्वेदी ने एक बहुत ही सामान्य विषय को यूनिवर्सल अपील के क्लासिकल स्तर तक उठा दिया है, इसी तरह 'मुर्गा लड़ाई' में बस्तर में जनजीवन की झांकी में स्थानीय भाषा का विपुल इस्तेमाल पाठक के लिए बाधा नहीं बनता, वह कथानक में इतना रम जाता है, रजनी शर्मा के इस प्रयास को मैं रेणु की श्रेष्ठ रचनाओं के समकक्ष रखना चाहूंगा... 'मुनियप्पा का मैन पावर सप्लाई' में कथाकार बी.एम. हनीफ ने वनांचलों और गांवों के जनजीवन पर समीपवर्ती महानगरों के प्रभाव का बड़ा ही मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया है। अंत में 'खिच्याक' कहानी का केन्द्र कैमरा है जो शादी-ब्याहों पर छाया रहता है। हेमेन्द्र पाण्डे अपने आलेख, रस्पूतिन (पेज 45) में बताने में सफल हुए हैं कि रचनाकार क्या कह रहा है और पाठक उसे क्यों पढ़े। इन दो मूल मुद्दों पर पंकज सुबीर (पेज 65) ने भी समाधानकारक चर्चा की है। परन्तु इसी क्रम में परिचय दास (अर्थ का आलोक) ने जटिल शैली में अपनी एक तरफ तारीफ के पुल बांधे हैं, मानो परीक्षा में प्रश्न का उत्तर लिख रहे हों। घर बैठे क्रान्ति का बिगुल बजा रहे हैं कविगण आजकल। किसी काम लायक बनने की क्रांति इनके अपने ही जीवन में आनी शेष हैं।

अंत में राजेन्द्र उपाध्याय का प्रेमचंद पर आलेख प्रवचन प्रतीत होता है और बड़बोलेपन से परिपूर्ण है, राजेन्द्र जी को इस अंक की चारों कहानियों को पढ़ना चाहिए जिनमें प्रेमचंद के बाद की रौशनी है।

पूरनचंद बाली 'नमन', सी-166, ओबेराय स्पैलण्डर
जीवीएल रोड, जोगेश्वरी (पूर्व), मुंबई-400 060